1.5. मगध-साम्राज्यवाद का उदय *(The Rise of the Magadhan Imperialism)*

छठी से चौथी शताब्दी ई० पू० के बीच राजनीतिक स्थिति की एक महत्त्वपूर्ण घटना है—मगध-राज्य या मगध-साम्राज्यवाद का उदय। **अंगुत्तरनिकाय** में वर्णित 16 महाजनपदों में अंततः मगध ही राजनीतिक सर्वोच्चता प्राप्त कर साम्राज्य की स्थिति में पहुँच सका। इस प्रयास में इसने अन्य महाजनपदों को पीछे छोड़ दिया। मगध के उत्थान में अनेक राजनीतिक, भौगोलिक और आर्थिक कारणों ने योगदान दिया। फलतः, हर्यंक-वंश, शिशुनाग-वंश और नंदवंश के शासकों ने अपने पराक्रम से मगध को उत्तरभारतीय राजनीति का केंद्र बना दिया। इसी नींव पर आगे चंद्रगुप्त मौर्य ने मौर्य-साम्राज्य की विशाल इमारत खड़ी की।

मगध के उदय के कारण—मगध-साम्राज्यवाद का उदय और विस्तार प्राक्-मौर्ययुगीन भारतीय राजनीति की सबसे महत्त्वपूर्ण घटना है। साम्राज्यवादी होड़ में इसने अपने समकालीन महाजनपदों को बहुत पीछे छोड़ दिया और स्वयं उत्तरी भारत की सर्वशक्तिशाली राजनीतिक इकाई बन बैठा। मगध-साम्राज्यवाद के उदय के अनेक कारण थे।

मगध की भौगोलिक स्थिति—मगध के उत्थान में वहाँ की भौगोलिक स्थिति ने महत्त्वपूर्ण भूमिका निबाही। यह राज्य उत्तरी भारत के विशाल तटवर्ती मैदानों के ऊपरी और निचले भाग के मध्य अति सुरक्षित स्थिति में अवस्थित थी। इसकी दोनों ही राजधानियाँ—राजगृह एवं पाटलिपुत्र—सामरिक दृष्टिकोण से अत्यंत सुरक्षित थीं। राजगृह चारों तरफ से पहाड़ियों से घिरा हुआ था। अतः, दुश्मन इसपर आसानी से आक्रमण कर विजय प्राप्त नहीं कर सकता था। राजगृह की चहारदीवारी को भेदकर अंदर प्रवेश करना अत्यंत कठिन था। इसलिए विदेशी आक्रमण की चिंता से मुक्त होकर मगध के शासक साम्राज्य-विस्तार की तरफ समुचित ध्यान दे सके। राजगृह की ही तरह पाटलिपुत्र की सामरिक स्थिति भी अत्यंत सुदृढ़ थी। यह वस्तुतः एक जलदुर्ग के समान थी जिसके चारों तरफ नदियाँ थीं। यह नगर गंगा, गंडक और सोन के मुहाने पर स्थित था। सरयू और पुनपुन नदियाँ भी पाटलिपुत्र के इर्द-गिर्द ही थीं। वस्तुतः, पाटलिपुत्र चारों तरफ से नदियों से घिरे होने के कारण अत्यंत सुरक्षित स्थिति में था। उत्तरी और पश्चिमी दिशा में सोन और गंगा नदियाँ तथा दक्षिण-पूर्वी दिशा में पुनपुन नदी इसकी सुरक्षा करती थीं। इन नदियों को पार कर आसानी से पाटलिपुत्र पर आक्रमण करना संभव नहीं था। इसलिए, यहाँ के शासकों को बाहरी आक्रमण और अपनी राजधानी की सुरक्षा की चिंता नहीं थी।

मगध में आर्थिक साधनों की बहुलता—मगध की आर्थिक संपन्नता ने भी मगध के उत्थान में सहायता पहुँचाई। मगध का क्षेत्र अत्यंत उपजाऊ था। चूँकि इस क्षेत्र में वर्षा भी अधिक होती थी, इसलिए बिना ज्यादा परिश्रम के उपज अधिक होती थी। अतिरिक्त उत्पादन के आधार पर उद्योग-धंधों एवं व्यापार-वाणिज्य का भी विकास हुआ। व्यापार के विकास में नदियों का भी योगदान था। उद्योग-धंधों के विकास के साथ-साथ छठी शताब्दी ई० पू० से नगरों का उत्थान हुआ। सिक्के का भी प्रचलन निकला। राज्य को भी इस आर्थिक संपन्नता में हिस्सा मिला। राज्य अब विभिन्न प्रकार के उगाहे गए करों के आधार पर आर्थिक रूप से संपन्न बन गया। आर्थिक संपन्नता ने उसे अपनी सैन्यशक्ति के संगठन और विस्तार का मौका दिया, जिसके आधार पर मगध के शासक साम्राज्यवादी नीति का अनुसरण कर सके।

मगध का सैन्य-संगठन—मगध के शासकों ने सैन्य-संगठन के मामले में बहुत दिलचस्पी ली। अभी तक युद्ध में घोड़ों का व्यवहार मुख्य रूप से किया जाता था; परंतु मगध के शासकों ने हाथियों को अपनी सेना में स्थान देना आरंभ किया। हाथियों की अनेक उपयोगिता थी। वे दलदली इलाकों में भी व्यवहार में लाए जा सकते थे, जबकि घोड़ों की उपयोगिता ऐसे इलाकों में नहीं के बराबर थी। हाथियों से दुर्गों के भेदने का काम भी लिया जा सकता था। मगध के इर्द-गिर्द के जंगली इलाकों से हाथी पर्याप्त संख्या में उपलब्ध हुए, जिसके बल पर मगध की सेना में हाथी की टुकड़ी का विशेष महत्त्व हो गया। अन्य समकालीन शासकों के पास गज-सेना की कमी थी। इसी प्रकार मगध को एक अन्य लाभ था। उसके इलाके में लोहे की अनेक खानें थीं। इन खानों से प्राप्त लोहे से युद्ध के नए अस्त्र-शस्त्र तैयार किए गए। अन्य राज्यों के पास (अवन्ती को छोड़कर) लोहे की कमी थी। अतः, वे मगध की सेना, जो नए अस्त्र-शस्त्रों से सुसज्जित थी, का प्रभावशाली ढंग से सामना नहीं कर सके।

मगध के शासकों का योगदान—मगध के उत्थान में वहाँ के शासकों की भी भूमिका महत्त्वपूर्ण रही है। मगध में एक के बाद एक अनेक ऐसे शक्तिशाली शासक हुए, जिन्होंने सैन्यबल और कूटनीति के आधार पर मगध की सीमा का विस्तार किया। मगध-साम्राज्य की नींव बिम्बिसार और अजातशत्रु जैसे महान सेनानायकों और नीतिनिपुण शासकों ने डाली। अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिए इन शासकों ने उचित-अनुचित प्रत्येक प्रकार का मार्ग अपनाया। बाद में शिशुनाग और महापद्मनंद जैसे प्रतापी शासकों ने भी मगध की सीमा का विस्तार किया।

मगध का स्वतंत्र वातावरण—मगध का वातावरण अन्य राज्यों की अपेक्षा अधिक स्वतंत्र था। चूँकि इसे 'अनार्यों' का देश माना जाता था, इसलिए यहाँ ब्राह्मण-व्यवस्था का कट्टरपन नहीं था। अनार्य तत्त्वों की बहुलता के कारण आर्यों का प्रभाव यहाँ कम था। यहाँ के लोगों में प्रसार की प्रवृत्ति और उत्साह उन राज्यों की अपेक्षा अधिक थी, जो बहुत दिनों से आर्यों के प्रभाव में थे। इन सभी कारणों ने मगध के विकास में महत्त्वपूर्ण भूमिका निबाही।

मगध का प्राचीन इतिहास

हर्यंक-वंश के पहले मगध का इतिहास बहुत स्पष्ट नहीं है। मगध का उल्लेख पहली बार **अथर्ववेद** में मिलता है। **ऋग्वेद** में यद्यपि मगध का उल्लेख नहीं मिलता, तथापि **कीकट (किराट)** नामक जाति और इसके शासक प्रमगंद का उल्लेख मिलता है। इसकी पहचान मगध से की गई है। **मागध** और **व्रात्यों** का उल्लेख वैदिक साहित्य में उपेक्षा और अवहेलना की दृष्टि से किया गया है। **अथर्वसंहिता** के व्रात्यभाग में ब्राह्मण-सीमा के बाहर रहनेवाले व्रात्य को पुंश्चली या वेश्या और मगध से संबद्ध कहा गया है। वेदों में मगध के ब्राह्मणों **(ब्रह्मबंधु)** को निम्न श्रेणी का माना गया है; क्योंकि उनके संस्कार ब्राह्मण-विधियों के अनुसार नहीं हुए थे।

बृहद्रथ वंश—वैदिक साहित्य से मगध के इतिहास की स्पष्ट जानकारी नहीं मिलती। इसमें प्रमगंद के अतिरिक्त मगध के अन्य किसी शासक का उल्लेख नहीं हुआ है। मगध के प्राचीन इतिहास की रूपरेखा **महाभारत** तथा **पुराणों** में मिलती है। इन ग्रंथों के मुताबिक मगध के सबसे प्राचीन राजवंश का संस्थापक बृहद्रथ था। वह जरासंध का पिता एवं वसु चैद्य-उपरिचर का पुत्र था। मगध की आरंभिक राजधानी वसुमती या गिरिव्रज की स्थापना का श्रेय वसु को ही था। बृहद्रथ का पुत्र जरासंध एक पराक्रमी शासक था, जिसने अनेक राजाओं को पराजित किया। अंततोगत्वा उसे श्रीकृष्ण के निर्देश पर भीम के हाथों पराजित होकर मरना पड़ा। रिपुंजय इस वंश (बृहद्रथ) का अंतिम शासक था। वह एक कमजोर और अयोग्य राजा था। अतः, उसके मंत्री पुलिक ने उसकी हत्या करवाकर अपने पुत्र को गद्दी पर बिठाया। इसी के साथ मगध में एक नए राजवंश का उदय हुआ। जैनग्रंथों में राजगृह के दो शासकों—**समुद्रविजय** तथा **गया** का भी उल्लेख मिलता है, परंतु उनकी वंशावली स्पष्ट नहीं है।

शैशुनाग या हर्यंक-वंश की स्थापना—बृहद्रथ-वंश के पश्चात मगध में जो नया राजवंश सत्ता में आया, वह शैशुनाग-वंश या हर्यंक-वंश के नाम से विख्यात है। जहाँ **पुराण** इस वंश को शैशुनाग-वंश मानते हैं, वहीं बौद्ध एवं जैनग्रंथों में इस वंश को हर्यंक-वंश कहा गया है। इस वंश के संस्थापक शिशुनाग या सुसुनाग थे। इस वंश का प्रथम महान शासक बिम्बिसार हुआ, जिसने मगध साम्राज्य की नींव रखी।

बिम्बिसार (544-492 ई० पू०) और मगध का विस्तार—बिम्बिसार के प्रारंभिक जीवन के विषय में बहुत स्पष्ट जानकारी नहीं मिलती। संभवतः, वह दक्षिणी बिहार के एक छोटे सैनिक अधिकारी का पुत्र था; परंतु **महावंश** एवं अन्य ग्रंथों में उसे भट्टिय या भाटियों का पुत्र बताया गया है। **अश्वघोष के बुद्धचरित** में बिम्बिसार को हर्यंक-कुल से संबद्ध बताया गया है। बिम्बिसार 'सेणिय' अथवा 'श्रेणिक' के नाम से भी जाना जाता था। किंवदंतियों के अनुसार, 14 वर्ष की अल्पायु में ही उसके पिता ने उसका राज्याभिषेक किया। उसका राज्याभिषेक संभवतः 544 ई० पू० में हुआ। उसके राज्याभिषेक के साथ ही मगध-साम्राज्यवाद के विकास की वह प्रक्रिया प्रारंभ होती है, जिसकी परिणति अशोक के समय में कलिंग-युद्ध के पश्चात हुई।[1]

जिस समय बिम्बिसार गद्दी पर आया, उस समय मगध की स्थिति बहुत-अच्छी नहीं थी। उसके इर्द-गिर्द के शासक अपनी शक्ति के विस्तार में लगे हुए थे। वृज्जि-संघ, जो मगध के उत्तर में स्थित था, की सैनिक शक्ति का विस्तार हो रहा था। अन्य राज्यों द्वारा भी विस्तारवादी नीति अपनाई जा रही थी। कोशल और अवन्ती के शासक अपनी-अपनी सीमा का विस्तार कर रहे थे। तक्षशिला और अवन्ती के शासकों के आपसी संबंध भी कटु थे। ऐसी परिस्थिति में अपने राज्य का विस्तार करने के पूर्व बिम्बिसार ने अपनी स्थिति सुदृढ़ करने के उद्देश्य से मित्रता एवं वैवाहिक संबंध स्थापित करने की नीति अपनाई।

बिम्बिसार का सबसे पहला काम था अवन्ती और गांधार के शासकों से मित्रता करना। अपने प्रयासों से उसने अवन्ती के राजा प्रद्योत और गांधार के राजा पौष्करसारिन में समझौता

करवाकर दोनों के साथ मैत्रीपूर्ण संबंध कायम कर लिए। इतना ही नहीं, जब राजा प्रद्योत पाण्डुरोग (पीलिया) से ग्रस्त था तब बिम्बिसार ने अपने प्रसिद्ध वैद्य **जीवक** को राजा का उपचार करने को भेजा। इससे दोनों की मैत्री प्रगाढ़ हो गई।

यूरोप के हैप्सबर्ग और बोरबन्स राजवंशों के राजाओं की तरह बिम्बिसार ने भी तत्कालीन राजवंशों से वैवाहिक संबंध स्थापित किए। उसकी यह नीति अत्यंत सफल हुई। जिन राज्यों से बिम्बिसार ने वैवाहिक संबंध स्थापित किए, वे राज्य मगध के मित्र बन गए। इसके साथ-साथ मगध को नए क्षेत्र एवं धन भी प्राप्त हुआ। इतना ही नहीं, इन मित्रराज्यों ने मगध को उत्तर तथा पश्चिम की तरफ अपना पाँव फैलाने में भी मदद दी। बिम्बिसार ने मद्र (पूर्वी पंजाब), कोशल एवं वैशाली के लिच्छवियों के साथ वैवाहिक संबंध स्थापित किए। मद्र की राजकुमारी **खेमा** ही बिम्बिसार की प्रधान रानी बनी। कोशल की राजकुमारी कोशल देवी (महाकोशल की पुत्री तथा पसेनदि या प्रसेनजित की बहन) अपने साथ दहेज में काशीग्राम भी साथ लाई, जिससे वार्षिक एक लाख का भू-राजस्व प्राप्त होता था। बिम्बिसार ने लिच्छवि-राजकुमारी चेलना से भी विवाह किया। इस विवाह का प्रभाव अजातशत्रु के शासनकाल पर पड़ा।

कूटनीति और वैवाहिक संबंधों द्वारा अपनी स्थिति सुदृढ़ करने के पश्चात बिम्बिसार ने राज्य-विस्तार के लिए सैनिक अभियान का सहारा लिया। मगध के पड़ोस में अब सबसे शक्तिशाली राज्य अंग ही था। अतः, बिम्बिसार ने अंग-विजय की योजना बनाई। उसने अंग पर आक्रमण कर वहाँ के राजा ब्रह्मदत्त को पराजित कर मार डाला और राज्य पर अपना कब्जा जमा लिया। अजातशत्रु को नए प्रदेश के प्रशासन का भार सौंपा गया। इस प्रकार कूटनीति, वैवाहिक संबंधों और सैनिक अभियान के द्वारा बिम्बिसार ने मगध-राज्य का विस्तार किया। इतना ही नहीं, बिम्बिसार ने नए राज्य की प्रशासनिक एवं आर्थिक स्थिति भी सुदृढ़ की। उसने एक सशक्त और कुशल प्रशासन की व्यवस्था की। उसने प्रशासन पर अपनी दृढ़ पकड़ बनाए रखी। अनेक अक्षम पदाधिकारियों को पदमुक्त कर दिया गया। राज्य के उच्च पदाधिकारी (राजभट्ट) विभिन्न श्रेणियों में विभक्त थे, जैसे सभात्तक, सेनानायक, वोहारिक इत्यादि। न्याय पर विशेष बल दिया गया। वोहारिक न्यायाधीश के समकक्ष थे। अपराधियों को कड़ी सजा दी जाती थी। मृत्यु-दंड, अंग-भंग और शारीरिक यातना देने की प्रथा प्रचलित थी। ग्रामभोजक गाँवों में शांति व्यवस्था बनाने और लगान वसूली का काम करते थे। स्थानीय स्वशासन में स्थानीय तत्त्वों को महत्त्व दिया गया लेकिन उन पर केंद्रीय सरकार का अंकुश बनाए रखा गया। उसने यातायात और संचार-व्यवस्था को भी विकसित किया। **महावग्ग** के अनुसार बिम्बिसार के राज्य में 80,000 शहर थे, परंतु इस विवरण पर विश्वास नहीं किया जा सकता। ह्वेनसांग बिम्बिसार द्वारा बनवाए गए मार्ग और नए नगर का उल्लेख करता है, लेकिन फाहियान के अनुसार अजातशत्रु ने राजगृह के नए नगर का निर्माण करवाया।

बिम्बिसार के जीवन का दुःखद अंत हुआ। पालि एवं प्राकृत-साहित्य से विदित होता है कि बिम्बिसार के पुत्र युवराज कूणिक अजातशत्रु ने अपने पिता को गिरफ्तार कर लिया या उसकी हत्या कर स्वयं सिंहासन पर बैठ गया। इसमें सच्चाई जो भी हो, परंतु अजातशत्रु के शासक बनते ही मगध-साम्राज्यवाद का तेजी से विस्तार हुआ। वस्तुतः, बिम्बिसार ने जिस साम्राज्यवादी प्रवृत्ति को आरंभ किया था, अजातशत्रु ने उसका विस्तार किया।

अजातशत्रु (492-462 ई० पू०) और मगध का चरमोत्कर्ष—492 ई० पू० में कूणिक अजातशत्रु मगध का राजा बना। उसके शासनकाल में मगध-साम्राज्यवाद का चरमोत्कर्ष हुआ और वह राजनीतिक सत्ता के शीर्ष पर पहुँच गया। **प्रो० रायचौधुरी** के शब्दों में, "प्रसिया (या प्रशा, यूरोप) के फ्रेडरिक द्वितीय की तरह अजातशत्रु ने अपने पिता की नीति का ही पालन किया, यद्यपि पिता से उसके संबंध कभी अच्छे नहीं रहे। उसका शासन हर्यंक-वंश का चरमोत्कर्ष-काल था।"[1] अजातशत्रु ने सैनिक अभियान आरंभ करने के पूर्व अपनी राजधानी एवं राज्य की सुरक्षा का प्रबंध किया। इस उद्देश्य से उसने राजगृह की किलेबंदी सुदृढ़ की।

राजगृह में एक नई चहारदीवारी बनवाई गई। राजगृह से दूर गंगा और सोन के संगम पर पाटलिग्राम में एक दुर्ग का भी निर्माण किया गया, जो बाद में मगध की नई राजधानी बनी। अपनी आंतरिक स्थिति सुदृढ़ कर अजातशत्रु ने सैनिक अभियान आरंभ किया।

कोशल के साथ संघर्ष—अजातशत्रु को सबसे पहले कोशल-राज्य के साथ युद्ध करना पड़ा। इस युद्ध का तात्कालिक कारण कोशला देवी (बिम्बिसार की रानी) को मिले काशीग्राम के राजस्व का रुकना था। बिम्बिसार की हत्या के पश्चात कोशला देवी की भी मृत्यु हो गई, परंतु काशीग्राम का राजस्व मगध को पूर्ववत मिलता रहा। कोशल-नरेश प्रसेनजित अपने बहनोई की हत्या और बहन की मृत्यु से विक्षुब्ध हो उठा। उसने पितृहंता अजातशत्रु को काशीग्राम का राजस्व देना अनुचित समझा और इसे बंद करवा दिया। क्रुद्ध होकर अजातशत्रु ने कोशल पर आक्रमण कर दिया। कोशल और मगध में लंबे समय तक युद्ध चला। इस युद्ध में कभी प्रसेनजित पराजित होता, तो कभी अजातशत्रु। एक बार प्रसेनजित को हारकर श्रावस्ती भाग जाना पड़ा; परंतु उसने हिम्मत नहीं हारी। दूसरी बार प्रसेनजित ने अजातशत्रु पर विजय प्राप्त कर उसे बंदी बना लिया; परंतु रिश्ते का लिहाज कर (अजातशत्रु प्रसेनजित का भाँजा था) उसने अजातशत्रु को स्वतंत्र कर दिया। इसके बाद दोनों पक्षों में समझौता हो गया। प्रसेनजित ने काशीग्राम राजस्व-सहित पुनः अजातशत्रु को वापस लौटा दिया। इतना ही नहीं, उसने अपनी पुत्री **वजीरा** का विवाह भी मगधराज अजातशत्रु के साथ कर दिया। फलतः दोनों राज्य एक-दूसरे के मित्र बन गए।

वैशाली पर विजय—अजातशत्रु का दूसरा महत्त्वपूर्ण कार्य वैशाली के लिच्छवियों को परास्त करना था। जैनसाहित्य से इस युद्ध के कारणों पर प्रकाश पड़ता है। कहा जाता है कि मृत्यु से पूर्व बिम्बिसार ने अपना प्रसिद्ध हाथी सेयणग (सेचनक) और अठारह लड़ियोंवाला हीरे का हार अपनी पत्नी **चेलना** से उत्पन्न पुत्रों, हल्ल और बेहल्ल, को दे दिया था। राजा बनने के बाद, अपनी रानी पउमावई या पद्मावती के उकसाने पर, अजातशत्रु ने इन दोनों वस्तुओं की माँग की। इन्हें वापस देने के बदले दोनों भाई अपने नाना के पास वैशाली भाग गए। इसपर क्रुद्ध होकर अजातशत्रु ने युद्ध आरंभ कर दिया। **सुमंगल विलासिनी** (बुद्धघोष की टीका) में युद्ध का एक अन्य कारण दिया गया है। इसके अनुसार कीमती पत्थरों या सुगंधित पदार्थों की खान के स्वामित्व को लेकर झगड़ा और मगध के शासक के साथ लिच्छवियों का विश्वासघात इस युद्ध का कारण था। युद्ध का एक अन्य संभावित कारण यह था कि एक साम्राज्यवादी शासक अपने पड़ोस में, भय या ईर्ष्यावश किसी अन्य शक्तिशाली राज्य का अस्तित्व स्वीकार करने को तैयार नहीं था। **महापरिनिब्बानसुत्त** से ज्ञात होता है कि जिस समय गौतम बुद्ध राजगृह में थे, उसी समय अजातशत्रु वैशाली-विजय की तैयारी कर रहा था। अजातशत्रु ने कहा था—"मैं वज्जियों का उन्मूलन कर दूँगा, चाहे वे कितने ही बली और ताकतवर क्यों न हों। मैं इन वज्जियों को उजाड़ दूँगा, मैं इन्हें नेस्तनाबूद कर दूँगा।"[1] उसने अपने निश्चय की सूचना बुद्ध के पास भी भिजवाई।

युद्ध आरंभ करने के पूर्व दोनों पक्षों ने तैयारी की। अजातशत्रु ने पाटलिग्राम में एक दुर्ग का निर्माण करवाया, जहाँ से युद्ध का संचालन किया जा सके। उसने अपने मंत्री वस्सकार को वैशाली भी भेजा, जिससे लिच्छवियों की एकता भंग की जा सके। वैशाली के शासक (चेटक) ने भी वृज्जिसंघ की सभा बुलाकर सबकी राय से युद्ध का निर्णय किया। वृज्जिसंघ को अनेक मगधविरोधी राज्यों का समर्थन प्राप्त हुआ। **प्रो॰ रायचौधुरी** ने ठीक ही लिखा है, "मगध-कोशल और मगध-वज्जि के युद्ध इक्का-दुक्का युद्ध की घटनाएँ नहीं थीं, वरन् मगध के बढ़ते प्रभाव के विरोध में चल रहे आंदोलन के प्रतीक भी थे। जिस प्रकार एक बार रोम के प्रभाव के विरुद्ध सैमनाइटों, इट्रस्कनों तथा गॉलों को संघर्षरत होना पड़ा था, उसी प्रकार मगध के विरुद्ध धुँधुआते धुँए ने भी युद्ध की लपटों का रूप ग्रहण कर लिया।"[2]

1. "I will

मगध और वैशाली के बीच लंबे समय तक युद्ध चलता रहा। यह युद्ध करीब 16 वर्षों (484-468 ई० पू०) तक चला। इस युद्ध में मगध की विजय युद्ध के नए उपकरणों—**महासिलाकण्टग** (पत्थर फेंकनेवाली मशीन) तथा **रथमूसल** (गदायुक्त गाड़ी) की मदद से हुई। लिच्छवियों के साथ-साथ पराजित राज्यों—काशी, विदेह, मल्ल इत्यादि—पर भी मगध का आधिपत्य कायम हो गया।

अवन्ती और मगध—मगध के बढ़ते प्रभाव से आतंकित होकर अवंती के शासक ने भी मगध पर आक्रमण की योजना बनाई। अवन्ती के इस संभावित आक्रमण से सुरक्षा के लिए अजातशत्रु को राजगीर की नई किलेबंदी करनी पड़ी थी। अवन्तीराज प्रद्योत बिम्बिसार (जो उसका मित्र था) की हत्या से दुखी और क्रुद्ध था। इसलिए उसने मगध पर आक्रमण की योजना बनाई, परंतु वह मगध पर आक्रमण नहीं कर सका।

अजातशत्रु के पश्चात मगध का विकास—462 ई० पू० में अजातशत्रु की मृत्यु हुई। अपने सैनिक पराक्रम से उसने मगध को एक महाजनपद से साम्राज्य में परिवर्तित कर दिया था। **आर्यमंजुश्रीमूलकल्प** के अनुसार अजातशत्रु के अधीन मगध के अतिरिक्त अंग, वाराणसी, वैशाली के इलाके भी थे। उसके उत्तराधिकारियों ने उसके कार्य को आगे बढ़ाया।

अजातशत्रु के पश्चात उसका पुत्र उदायिन् या उदायिभद्र मगध का शासक बना। पुराणों के अनुसार अजातशत्रु का उत्तराधिकारी दर्शक बना परंतु बौद्ध और जैन साहित्य उदायिन् को ही अजातशत्रु का उत्तराधिकारी मानते हैं। वह भी चंपा में गवर्नर था। उसने भी अपने माता-पिता की हत्या कर गद्दी प्राप्त की। उसके समय की सबसे प्रसिद्ध घटना है मगध की राजधानी का स्थानांतरण। राजधानी अब (457 ई० पू०) राजगृह से हटाकर पाटलिपुत्र में स्थापित की गई। इस समय अवन्ती की शक्ति अपनी चरम सीमा पर थी और वह मगध को अपने प्रभाव में लाने का स्वप्न देख रहा था। संभवतः, मगध और अवन्ती के बीच युद्ध भी हुए, परंतु इस युद्ध का कोई निर्णायक फल उदायिन् के समय में नहीं निकल सका। पुराणों के अनुसार उदायिन् के बाद नन्दिवर्धन और महानंदी राजा बने, लेकिन श्रीलंका के बौद्धग्रंथों के अनुसार अनुरुद्ध, मुण्ड और नागदासक उदायिन् के उत्तराधिकारी थे। इन सभी शासकों ने करीब 32 वर्षों तक राज्य किया। उदायिन् के उत्तराधिकारी (अनुरुद्ध, मुण्ड एवं नागदासक) प्रभावशाली शासक नहीं थे। अतः, इनके समय में मगध के विकास की गति अवरुद्ध हो गई।

शिशुनाग-वंश और अवन्ती का पतन—हर्यंक-वंश के शासक इस समय तक जनसमर्थन खो चुके थे। श्रीलंका के बौद्धग्रंथों से विदित होता है कि चूँकि बिम्बिसार से नागदासक तक मगध के सभी राजाओं ने अपने पिता की हत्या की थी, इसलिए नागरिकों ने क्रोध में पूरे राज-परिवार को राजधानी से निकाल दिया और उसकी जगह सत्ता उसके अमात्य को सौंप दी। फलस्वरूप, मगध में नए राजवंश की स्थापना हुई, जो शिशुनाग-वंश के नाम से विख्यात है। शिशुनाग बनारस में राजा का (मगध के राजा का) गवर्नर था। मगध में फैली अव्यवस्था को दूर करने के लिए यह स्वयं शासक बन बैठा (430 ई० पू०)। उसके विषय में कहा जाता है कि वह वैशाली के राजा और वहाँ की एक सुंदर नगरवधु से उत्पन्न हुआ था। शिशु अवस्था में ही उसके माता-पिता ने उसका परित्याग कर दिया था। उसकी रक्षा एक नाग ने की। इसलिए वह शिशुनाग के नाम से विख्यात हुआ। बाद में उसका पालन-पोषण वैशाली के एक पदाधिकारी ने किया। बौद्धग्रंथों के अनुसार शिशुनाग ने 18 वर्ष और पुराणों के अनुसार 40 वर्ष शासन किया।

शिशुनाग के शासनकाल की सबसे प्रमुख घटना अवन्ती के साथ युद्ध है। इस समय तक प्रद्योत की मृत्यु हो चुकी थी। अवन्ती का शासक अब अवन्तिवर्धन था। उसमें प्रद्योत जैसी वीरता नहीं थी। फलतः, शिशुनाग ने उसे युद्ध में परास्त कर अवन्ती पर अधिकार कर लिया और उसे मगध-साम्राज्य का भाग बना लिया। शिशुनाग ने संभवतः अपनी राजधानी वैशाली में बनाई या वैशाली मगध-साम्राज्य की दूसरी राजधानी बन गई।

शिशुनाग के बाद इस वंश में अन्य कोई योग्य शासक नहीं हुआ। शिशुनाग के बाद काकवर्ण या कालाशोक गद्दी पर आया। शासक बनने के पूर्व वह भी बनारस और गया का

प्रशासक रह चुका था। इसके समय में बौद्धों की दूसरी सभा वैशाली में हुई तथा राजधानी पुनः पाटलिपुत्र को बनाई गई। उसने संभवतः उज्जयिनी पर भी अधिकार किया। उसने 28 या 26 वर्षों तक राज्य किया। कांलाशोक की भी हत्या कर दी गई। तत्पश्चात उसके दस पुत्रों ने एक ही साथ दस वर्षों तक शासन किया, परंतु उनके शासनकाल में कोई उल्लेखनीय घटना नहीं घटी। **महबोधिवंश** के अनुसार कालाशोक के दस पुत्रों के नाम इस प्रकार थे—भद्रसेन, कोर्णदवर्ण, मंगुर, सर्वज्ञजह, जालिक, उभक, संजय, कोर्व्य, नन्दिवर्धन और पंचमक। नन्दिवर्धन का उल्लेख पुराणों में भी हुआ है।

नंदवंश का उत्थान और पतन—शिशुनाग-वंश के पश्चात नंदवंश की स्थापना (364 ई० पू०) हुई। इस वंश का संस्थापक उग्रसेन या महापद्म था। महापद्म संभवतः शूद्र जाति का था। पुराणों में महापद्म को 'सर्वक्षत्रान्तक (सभी क्षत्रियों का नाश करनेवाला)' और 'द्वितीय परशुराम' कहा गया है। महापद्म एक शक्तिशाली शासक था। एक विशाल सेना की सहायता से उसने तत्कालीन प्रसिद्ध क्षत्रिय-कुलों (इक्ष्वाकु, पांचाल, काशी, अश्मक, कुरु, शूरसेन इत्यादि) को परास्त कैर अपनी शक्ति का विस्तार किया। खारवेल के हाथीगुम्फा-अभिलेख से पता चलता है कि उसने कलिंग के कुछ हिस्सों पर भी अधिकार किया। उसके राज्य के सीमांतर्गत अब पंजाब से पूर्व का संपूर्ण भारत, मालवा, मध्यप्रदेश, कलिंग तथा गोदावरी नदी तक का इलाका आ गया। संभवतः महाराष्ट्र और मैसूर का कुछ भाग भी उसके साम्राज्य में सम्मिलित था। मगध की शक्ति अपनी चरम सीमा तक पहुँच चुकी थी। इतिहासकार **प्लिनी** के अनुसार, "शक्ति और वैभव के मामले में प्रासी (पूर्वी प्रदेश) संपूर्ण भारत में श्रेष्ठ थी। इसकी राजधानी पालिबोथ्र थी।"[1] महापद्मनंद ने अपने उत्तराधिकारियों के लिए न सिर्फ एक विशाल साम्राज्य छोड़ा ब्रल्कि एक बड़ी और विशाल सेना तथा भरा-पूरा राजकोष भी। कर्टियस के विवरण के अनुसार गंगारीदे और प्राशी के शासक अग्रामेश (धनानंद) के पास 20,000 घुड़सवार, 2,00,000 पैदल सैनिक, 2,000 रथ और 3,000 हथियों की सेना थी। डायोडोरस और प्लूटार्क भी नंदों की विशाल सेना का उल्लेख करते हैं। महापद्म ने कलिंग में एक नहर का भी निर्माण करवाया। बिम्बिसार के समय से मगध का जो सैनिक अभियान आरंभ हुआ था, वह अपनी पराकाष्ठा पर पहुँच गया। उसने करीब 28 वर्षों तक राज्य किया।

महापद्म के पश्चात नंदवंश के शासकों की शक्ति और प्रतिष्ठा में निरंतर ह्रास होता गया। महापद्म के बाद नौ नंद राजाओं ने शासन किए। नौ-नंद राजाओं में से पुराणों में महापद्म, उसके पुत्र सुकल्प और अंतिम शासक धनानंद का उल्लेख है लेकिन **महाबोधिवंश** के अनुसार महापद्म के उत्तराधिकारियों के नाम थे—पंडुक, पंडुगति, भूतपाल, राष्ट्रपाल, गोविशानक, दसिधक, कैवर्त और धन (धनानंद)। इन लोगों ने 12 वर्षों तक शासन किया। नौ-नंदों ने कुल मिलाकर 22 वर्षों तक राज्य किया। धनानंद सिकंदर का समकालीन था। अंतिम शासक धनानंद या धननंद एक अत्याचारी शासक था। उसके विषय में कहा जाता है कि वह प्रजा पर बहुत अधिक और अनुचित कर लगाता था, जैसे चमड़े, गोंद, पेड़ और पत्थर पर भी कर लगाता था। उसने 80 कोटि धन गंगा के गर्भ में छुपा कर रखा था। जनता उसके अत्याचारों से पीड़ित और त्रस्त थी और उससे मुक्ति का उपाय ढूँढ़ रही थी। इन्हीं परिस्थितियों में चंद्रगुप्त मौर्य ने चाणक्य (कौटिल्य) और मगध की जनता के सहयोग से नंदवंश का अंत कर मौर्यवंश की स्थापना की।

नंदवंश के शासकों का मगध साम्राज्यवाद के विकास में महत्त्वपूर्ण योगदान है। महापद्मनंद ने लगभग पूरे उत्तरी भारत और दक्कन के कुछ क्षेत्रों को भी मगध के नेतृत्व में एक राजनीतिक सूत्र में बाँध दिया था। इसके साथ ही उनलोगों ने एक सुदृढ़ प्रशासनिक व्यवस्था एवं सैन्य बल का भी गठन किया था। नंदों ने न सिर्फ हखामनी वंश के शासकों के भारत में बढ़ने पर रोक लगा दी, बल्कि उनकी शक्ति के भय से विश्वविजेता सिकंदर की सेना को भी भारत से वापस लौटने को बाध्य होना पड़ा। नंदों से मौर्य भी लाभान्वित हुए। विरासत में मौर्यों को एक विशाल साम्राज्य, सेना और खजाना प्राप्त हुआ। नंदों के समय में ही मगध की राजधानी

पाटलिपुत्र उत्तर भारतीय राजनीति की केंद्र बन चुकी थी। यह नगर आर्थिक और सांस्कृतिक केंद्र के रूप में भी विकसित हुआ। यहाँ शिक्षा की भी प्रगति हुई। वर्ष, उपवर्ष, पाणिनी, कत्यायन और वरुचि नंदकालीन पाटलिपुत्र के विख्यात विद्वान थे। नंदों ने ब्राह्मणों को उदारतापूर्वक दान देकर शिक्षा और साहित्य के विकास को प्रश्रय दिया। साथ ही नंदों ने जैनधर्म को भी प्रश्रय दिया। सबसे बड़ी बात थी कि निम्नवर्ग के होते हुए भी कुछ नंद शासकों ने कुशलतापूर्वक राज्य किया।

इस प्रकार, मगध-साम्राज्यवाद का उदय और विस्तार विभिन्न परिस्थितियों में हुआ और विभिन्न चरणों में पूरा हुआ।